शेख जाकिर

बनाम

बिहार राज्य

(Sheikh Zakir

v.

State of Bihar)

(2 जून, 1983)

(न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या और वी० बालकृष्ण एराडी)

भारतीय दण्ड संहिता, 1860 (1860 का 45)—धारा 376 [सपठित भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872, (1872 का 1) की धारा 157]—अभियोक्त्री का परिसाक्ष्य—संपुष्टि—एक जन-जातीय मजदूर स्त्री द्वारा बलात्कार करने सम्बन्धी अभिकथन किया जाना—उसके द्वारा घटना के तुरन्त बाद अपने पति को बलात्कार के बारे में बताया जाना—पुलिस द्वारा रिपोर्ट लिखने से इंकार किए जाने पर न्यायालय में परिवाद किया जाना—परिवाद में अंकित कुछ साक्षियों द्वारा अभियोजन-पक्ष के कथन की पुष्टि न की जानी—स्त्री की चिकित्सा परीक्षा न की जानी—इस स्थिति में भी धारा 376 के अधीन अभियुक्त को सिद्धदोष ठहराने के लिए धारा 157 के अधीन उसके पति द्वारा की गई सम्पुष्टि पर्याप्त है।

पूर्णिया के मुन्सिफ मजिस्ट्रेट ने उप-खण्ड अधिकारी के समक्ष परिवादी द्वारा फाइल किए गए परिवाद के आधार पर अपीलार्थी को अपने आदेश द्वारा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 के अधीन दण्डनीय अपराध के कारण विचारण के लिए सुपुर्द किया। परिवाद में किए गए अभिकथन संक्षेप में इस प्रकार हैं: 25 वर्षीय विवाहित स्त्री-परिवादी जिला-पूर्णिया में स्थित धुमरा बध में अपने मकान के दक्षिणी-दिशा में स्थित अपने खेत से धान के पौधे उखाड़ रही थी। खेत के पूर्व में एक नहर थी और आस-पास कोई मकान नहीं था। जिस समय

1983(6) eILR(PAT) SC 1

वह अपने खेत में काम कर रही थी, अपीलार्थी उसके पास आया और उससे मजाक करने लगा तथा उससे लैंगिक मैथुन करने के लिए कहा। जब उसके कहने पर परिवादी ने विरोध किया तो अपीलार्थी ने अचानक उसे पकड़ लिया और जमीन पर गिरा दिया, उसके कपड़े उतार दिए और उसके साथ बलात्कार किया। मदद के लिए उसकी चीत्कार सुनकर कुछ लोग उस स्थान पर पहुंच गए। अपीलार्थी तुरन्त भाग गया। तत्पश्चात्, परिवादी अपने घर गई और उसने उस घटना का वृतान्त अपने पति को बताया। इसके बाद, परिवादी और उसका पति स्थानीय मुखिया के पास गए। मुखिया ने उनसे न्यायालय में परिवाद फाइल करने के लिए कहा। तब वे अपराध की इत्तिला देने के लिए पुलिस थाने गए किन्तु पुलिस अधिकारी ने रिपोर्ट दर्ज करने से इन्कार कर दिया, क्योंकि अपीलार्थी एक प्रभावशाली व्यक्ति था। परिवादी परिवाद दाखिल करने के लिए 8 अगस्त, 1968 को न्यायालय में गई, किन्तु चूंकि परिवाद तैयार करने तक परिवाद दाखिल करने का समय समाप्त हो चुका था, इसलिए उसने परिवाद 9 अगस्त, 1968 को दाखिल किया। परिवाद में कुछ साक्षियों के भी नाम दिए गए थे। विचारण में परिवादी की परीक्षा अभियोजन साक्षी-3 के रूप में की गई। वह संथाल जन-जाति की है। उसने कहा कि अपीलार्थी ने उसके साथ उसकी इच्छा के विरुद्ध लैंगिक मैथुन बलपूर्वक किया है। उसने कहा कि उसकी चीख सुनकर अभियोजन साक्षी-1 वहां आ पहुंचा। उसे देखकर अपीलार्थी भाग गया। उसने यह भी कहा कि उसने घटना का वृतान्त अभियोजन साक्षी-2. चन्दा किसकू और मकबूल को भी बताया था जो कि वहां आ गए थे और यह कि उसने अपने कपड़े पर वीर्य के धब्बे एवं जमीन पर रगड़ने के निशान भी उन्हें दिखाए थे। उसने यह भी कहा कि उसने घटना का वृतान्त अपने पति और गांव के मुखिया को भी बताया था। उसका यह भी कहना है कि जब वह और उसका पति पुलिस थाने गए तो उन्हें पुलिस अधिकारी ने धमकाया और वहां से भगा दिया। उसने पूर्णिया जाने और परिवाद दाखिल करने के बारे भी में बताया। अभियोजन साक्षी-1 ने यह अभिसाक्ष्य देकर परिवादी के साक्ष्य की संपुष्टि की कि जब वह घटना-स्थल पर पहुंचा तो उसने अपीलार्थी को परिवादी पर पड़े हुए पाया। अभियोजन साक्षी-2 का कहना है कि जब वह घटना-स्थल के नजदीक गया तो उसने देखा कि अपीलार्थी वहां से भाग रहा था। उसका कहना है कि परिवादी ने अपीलार्थी द्वारा किए गए अपराध का विस्तृत वृतान्त उसने सुना था। परिवादी के पति

1983(6) eILR(PAT) SC 1

अभियोजन साक्षी–4 का कथन है कि घटना की शाम को परिवादी ने उसे यह बताया कि किस तरह से अपीलार्थी ने उसके साथ बलात्कार किया और उसने मुखिया के पास और पुलिस थाने जाने के बारे में तथा वहां जो कुछ हुआ, उसके बारे में साक्ष्य दिया, जैसा कि परिवादी द्वारा बताया गया था। विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अपीलार्थी बलात्कार का दोषी है, अतः उसने तदनुसार अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 के अधीन दण्डनीय अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया और उस पर 5 वर्ष के कठिन कारावास का दण्डादेश अधिरोपित कर दिया। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की अपील खारिज कर दी। विशेष इजाजत लेकर की गई यह अपील उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है। अपील खारिज करते हुए;

अभिनिर्धारित—यह बिल्कुल भी अजीब नहीं है कि कुछ साक्षी पक्षद्रोही हो जाते हैं किन्तु केवल इसी से न्यायालय अभियुक्त को दोषी करार देने से निवारित नहीं हो जायेंगे यदि अन्यथा अभियोजन-पक्ष के समर्थन में स्वीकार्य साक्ष्य है। प्रस्तुत मामले में, विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने अभियोक्त्री के साक्ष्य पर तथा अभियोजन-पक्ष के अन्य साक्षियों के साक्ष्य पर विश्वास किया। (पैरा 5)

परिवादी और उसके पति ने अपने अभिसाक्ष्य में कहा है कि वे उसके पास घटना की तारीख को गए थे। उसे यह दिखाने के लिए साक्षी के रूप में प्रोद्भूत किया गया कि घटना के तुरन्त बाद परिवादी ने उसके समक्ष अपराध के बारे में कथन किया था जो कि संपोषक साक्ष्य होगा। चूंकि परिवादी और उसका पति सुदूर क्षेत्र में रहने वाली संथाल जनजाति जैसे पिछड़े समाज के व्यक्ति हैं, इसलिए उनसे यह प्रत्याशा नहीं की जा सकती कि उन्हें यह ज्ञान हो कि तुरन्त डाक्टर के पास जाना चाहिए। वस्तुतः परिवादी ने अभिसाक्ष्य दिया है कि घटना के बाद उसने स्नान कर लिया और अपने कपड़े धो लिए थे। हो सकता है कि परिवादी के शरीर पर कोई क्षतियां न होने मात्र से परिवादी का कथन अविश्वसनीय न हो। मात्र इसलिए कि परिवादी एक असहाय शिकार थी, जिसे बलपूर्वक बहुत अधिक शारीरिक प्रतिरोध नहीं करने दिया गया उस पर अविश्वास नहीं किया जा सकता। यदि अभिलेख पर अन्य विद्यमान साक्ष्य विश्वसनीय है तो ऐसी स्थिति में पहले चिकित्सा रिपोर्ट पेश न करने से बहुत अधिक प्रभाव नहीं पड़ेगा। फिर भी यह किसी ने नहीं कहा है कि ऐसी कोई रिपोर्ट थी

1983(6) eILR(PAT) SC 1

और इसे पेश नहीं किया गया। (पैरा 8)

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 133 का कहना है कि सह-अपराधी अभियुक्त-व्यक्ति के विरुद्ध सक्षम साक्षी होगा और कोई दोषसिद्धि इसलिए अवैध नहीं है कि वह किसी सह-अपराधी के असंपुष्ट परिसाक्ष्य के आधार पर की गई है। किन्तु पद्धति का नियम है कि अन्य स्वतंत्र साक्ष्य द्वारा सह-अपराधी के साक्ष्य को संपुष्ट कर लेना प्रज्ञापूर्ण होगा। पद्धति का नियम मानव-अनुभव पर आधारित है और इसका समावेश भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के दृष्टांत (ख) में किया गया है, जिसका कहना है कि सह-अपराधी विश्वसनीयता के अयोग्य होता है जब तक कि तात्विक विशिष्टियों में उसकी संपुष्टि नहीं होती। हालांकि, बलात्कार की शिकार को सह-अपराधी नहीं माना जा सकता, फिर भी अनेक वर्षों के दौरान हमारे देश में किए गए अनेक न्यायिक विनिश्चयों के फलस्वरूप बलात्कार के मामले में क्षतिग्रस्त का साक्ष्य सह-अपराधी के साक्ष्य की तरह माना जाता है, जिसके लिए संपुष्टि आवश्यक है। जहां मामले का विचारण अकेले न्यायाधीश द्वारा किया जाता है, जैसा कि भारतीय न्यायालयों में किया जाता है, वहां निर्णय के दौरान यह संकेत किया जाना चाहिए कि न्यायाधीश के दिमाग में वह सिद्धांत था जिसमें उसने यह निर्णय तैयार किया है और यदि किसी मामले में न्यायाधीश यह देखता है कि ऐसी संपुष्टि की आवश्यकता नहीं है तो उसे ऐसी संपुष्टि की आवश्यकता से मुक्ति के कारण देने चाहिए। किन्तु यदि दोषसिद्धि बिना किसी संपुष्टि के अभियोक्त्री के साक्ष्य पर आधारित है तो वह मात्र इसी आधार पर अवैध नहीं होगी। विवाहित और बड़ी स्त्री की दशा में ऐसी संपुष्टि का आग्रह करना हमेशा सुरक्षित होगा। जहां कहीं संपुष्टि आवश्यक है, वहां स्वतंत्र स्रोत से होनी चाहिए किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि प्रभावित व्यक्ति के साक्ष्य का प्रत्येक अंश सूक्ष्म रूप से स्वतंत्र साक्ष्य द्वारा पुष्ट किया जाए। ऐसी संपुष्टि या तो सीधे साक्ष्य से या परिस्थितिजन्य साक्ष्य से या दोनों से अपेक्षित की जा सकती है। अभियोजन साक्षी-1 और अभियोजन साक्षी-2 द्वारा आंखों देखी घटना के साक्ष्य के अलावा, घटना के तुरन्त बाद अपने पति से परिवादी द्वारा किया गया कथन भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 157 के अधीन ग्राह्य है और उसका संपोषक महत्व है। (पैरा 9)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1981]	[1881] 1 उम० नि० प० 1117= [1981] 3 एस० सी० आर० 305 : कृष्ण लाल बनाम हरियाणा राज्य (Krishan Lal *v*. State of Haryana);	9
[1973]	[1973] 1 उम० नि० प० 165= [1973] 2 एस० सी० आर० 197 : गुरुचरण सिंह बनाम हरियाणा राज्य (Gurucharan Singh *v*. State of Haryana);	9
[1952]	[1952] एस० सी० आर० 377 : रामेश्वर बनाम राजस्थान राज्य (Rameshwar *v*. The State of RaJasthan);	9
[1916]	[1916] 2 के० बी० 658 : सम्राट बनाम बास्करविल्ले (King *v*. Baskerville).	9

दाण्डिक अपीली अधिकारिता : 1974 की दाण्डिक अपील सं० 440.

1969 की दांडिक अपील सं० 579 में पटना उच्च न्यायालय के तारीख 17 सितम्बर, 1974 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध विशेष इजाजत लेकर की गई अपील।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री देवेन्द्र एन० गोवर्धन और डी० गोवर्धन
प्रत्यर्थी की ओर से	श्री एस० एन० झा

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति ई० एस० वेंकटरामय्या ने दिया।

न्यायाधिपति वेंकटरामय्या—

विशेष इजाजत लेकर की गई यह अपील पटना उच्च न्यायालय द्वारा 1969 की दाण्डिक अपील सं० 579 में पारित निर्णय तारीख 17 सितम्बर,

1983(6) eILR(PAT) SC 1

1974 के विरुद्ध फाइल की गई है। पटना उच्च न्यायालय ने बिहार राज्य में पूर्णिया के सहायक सैशन न्यायाधीश द्वारा 1968 के सैशन विचारण सं० 107 में 20 दिसम्बर, 1969 को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 के अधीन दण्डनीय अपराध से अपीलार्थी की दोषसिद्धि और उस पर अधिरोपित पांच वर्ष के कठिन कारावास के दण्डादेश की पुष्टि कर दी थी।

2. मुन्सिफ मजिस्ट्रेट, प्रथम वर्ग, पूर्णिया ने पूर्णिया सदर के उप-खण्ड अधिकारी के समक्ष, जिसने अपराध का संज्ञान किया था और मामला उपरोक्त मजिस्ट्रेट के पास भेज दिया था, 9 अगस्त, 1968 को परिवादी बर्की देवी (अभियोजन साक्षी-3) द्वारा फाइल किए गए परिवाद के आधार पर अपीलार्थी को अपने आदेश द्वारा भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 के अधीन दण्डनीय अपराध के कारण विचारण के लिए सुपुर्द किया।

3. परिवाद में किए गए अभिकथन संक्षेप में इस प्रकार हैं : तारीख 7 अगस्त, 1968 को शाम के लगभग 5 बजे लगभग 25 वर्षीय विवाहित स्त्री-परिवादी मौजा धमदाह, पुलिस थाना धमदाह, जिला पूर्णिया में स्थित धुमरा बध में अपने मकान के दक्षिणी-दिशा में स्थित अपने खेत से धान के पौधे उखाड़ रही थी। खेत के पूर्व में एक नहर थी और आसपास कोई मकान नहीं था। जिस समय वह अपने खेत में काम कर रही थी, अपीलार्थी उसके पास आया और उससे मज़ाक करने लगा तथा उसने उससे लैंगिक मैथुन करने के लिए कहा। जब उसके कहने पर परिवादी ने विरोध किया तो अपीलार्थी ने अचानक उसे पकड़ लिया और जमीन पर गिरा दिया, उसके कपड़े उतार दिये और उसके साथ बलात्कार किया। मदद के लिए उसकी चीत्कार सुनकर कुछ लोग उस स्थान पर पहुंच गए। अपीलार्थी तुरन्त भाग गया। तत्पश्चात्, परिवादी अपने घर गई और उसने उस घटना का वृतान्त अपने पति जीतराय (अभियोजन साक्षी-4) को बताया। इसके बाद, परिवादी और उसका पति स्थानीय मुखिया के पास गए। मुखिया ने उनसे न्यायालय में परिवाद फाइल करने के लिए कहा। तब वे अपराध की इत्तिला देने के लिए पुलिस थाने गए किन्तु पुलिस अधिकारी ने रिपोर्ट दर्ज करने से इन्कार कर दिया क्योंकि अपीलार्थी एक प्रभावशाली व्यक्ति था। परिवादी परिवाद दाखिल करने के लिए 8 अगस्त, 1968 को न्यायालय में गई, किन्तु चूंकि परिवाद तैयार करने तक परिवाद दाखिल करने का समय समाप्त हो चुका था, इसलिए उसने परिवाद 9 अगस्त, 1968 को दाखिल किया। परिवाद में कुछ साक्षियों के भी नाम दिए गए थे।

4. विचारण में परिवादी की परीक्षा अभियोजन साक्षी-3 के रूप में की गई। वह संथाल जन-जाति की है। अपने साक्ष्य में उसने घटना का उसी प्रकार वर्णन किया, जैसा उसके परिवाद में बताया गया था। उसने कहा कि अपीलार्थी ने उसके साथ उसकी इच्छा के विरुद्ध लैंगिक मैथुन बलपूर्वक किया है। उसने कहा कि उसकी चीख सुनकर शेखलफीद (अभियोजन साक्षी-1) वहां आ पहुंचा। उसे देखकर अपीलार्थी भाग गया। उसने यह भी कहा कि उसने घटना का वृत्तान्त जुमन नदाफ (अभियोजन साक्षी-2), चन्दा किसकू और मकबूल को भी बताया था जो कि वे वहां आ गए थे और यह कि उसने अपने कपड़े पर वीर्य के धब्बे एवं जमीन पर कुचलने के निशान भी उन्हें दिखाए थे। उसने यह भी कहा कि उसने घटना का वृतान्त अपने पति और गांव के मुखिया को भी बताया था। उसका यह भी कहना है कि जब वह और उसका पति पुलिस थाने गए तो उन्हें पुलिस अधिकारी ने धमकाया और वहां से भगा दिया। उसने पूर्णिया जाने और परिवाद दाखिल करने के बारे में भी बताया। शेखलफीद (अभियोजन साक्षी-1) ने यह अभिसाक्ष्य देकर परिवादी के साक्ष्य की संपुष्टि की कि जब वह घटना-स्थल पर पहुंचा तो उसने अपीलार्थी को परिवादी पर पड़े हुए पाया। जुमन नदाफ (अभियोजन साक्षी-2) का कहना है कि जब वह घटना-स्थल के नज़दीक गया तो उसने देखा कि अपीलार्थी वहां से भाग रहा था। उसका कहना है कि परिवादी ने अपीलार्थी द्वारा किए गए अपराध का विस्तृत वृतान्त उनसे सुना था। परिवादी के पति जीतराय (अभियोजन साक्षी-4) का कथन है कि घटना की शाम को परिवादी ने उसे यह बताया कि किस तरह से अपीलार्थी ने उसके साथ बलात्कार किया और उसने मुखिया के पास और पुलिस थाने जाने के बारे में तथा वहां जो कुछ हुआ, उसके बारे में साक्ष्य दिया, जैसा कि परिवादी द्वारा बताया गया था। वकील, रमाकांत ठाकुर (अभियोजन साक्षी-5) ने परिवाद लिखा था। उसका कहना है कि परिवाद परिवादी के कहने पर तैयार किया गया था।

5. अपने समक्ष की सामग्री पर विचार करने के बाद विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि अपीलार्थी बलात्कार का दोषी है, अतः उसने तदनुसार अपीलार्थी को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 376 के अधीन दण्डनीय अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया और उस पर 5 वर्ष के कठिन कारावास का दण्डादेश अधिरोपित कर दिया। उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की अपील खारिज कर दी। विशेष इजाज़त लेकर की गई यह अपील उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है। जब 6 मार्च,

1983(6) eILR(PAT) SC 1

1980 को इस न्यायालय ने अपील की सुनवाई की तो यह आदेश दिया कि विचारण न्यायालय मुखिया, मकबूल और चंदा किसकू के साक्ष्य को लेखबद्ध करे और अभिलेख इस न्यायालय में प्रस्तुत करे। मुखिया और कबूल का साक्ष्य, तदनुसार लेखबद्ध किया गया और इस न्यायालय में प्रस्तुत किया गया। चंदा किसकू के बारे में रिपोर्ट दी गई कि वह मर चुका है। अन्य दो साक्षियों ने अभियोजन-पक्ष के कथन की पुष्टि नहीं की है। यह प्रकट है कि ये दो साक्षी, जिनका परिवाद में साक्षियों के रूप में बताया गया था, विचारण के समय भी अभियोजन पक्ष का समर्थन करने के इच्छुक नहीं थे क्योंकि अन्यथा उनकी परीक्षा की जाती। यह बिल्कुल भी अजीब नहीं है कि कुछ साक्षी पक्षद्रोही हो जाते हैं किन्तु केवल इसी से न्यायालय अभियुक्त को दोषी करार देने से निवारित नहीं हो जायेंगे यदि अन्यथा अभियोजन-पक्ष के समर्थन में स्वीकार्य साक्ष्य है। प्रस्तुत मामले में, विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने अभियोक्त्री के साक्ष्य पर तथा अभियोजन-पक्ष के अन्य साक्षियों के साक्ष्य पर विश्वास किया।

6. इस मामले में विचारणीय मुद्दा यह है कि क्या इस मामले में उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय ने जो दृष्टिकोण अपनाया है वह सही है और क्या इतनी पर्याप्त सामग्री है कि उनके द्वारा लेखबद्ध दोषसिद्धि सही है।

7. हमारे समक्ष वाले मामले में परिवादी ने अपने अभिसाक्ष्य में घटना का वर्णन दिया है और उच्च न्यायालय एवं विचारण न्यायालय ने भी उसे अविश्वसनीय नहीं पाया है, फिर भी अपीलार्थी का पक्षकथन था कि एक ओर मोहम्मद हलीम और मोहम्मद नईम तथा दूसरी ओर उसके बीच एक भूमि के झगड़े के फलस्वरूप, जो कि अन्ततः उसके पक्ष में तय हुआ, यह झूठा मामला उन्होंने परिवादी और उसके पति जीतराय के माध्यम से फाइल करवाया है। ये दोनों उनके सेवक के रूप में काम करते हैं। मुखिया और उस पुलिस अधिकारी की परीक्षा न करना, जिसने परिवादी और उसके पति के अभिकथनों के अनुसार की गई रिपोर्ट लेखबद्ध करने से इन्कार किया था, अभियोजन-पक्ष के लिए घातक बतायी गयी है। साथ ही यह भी कहा गया है कि घटना के तुरन्त बाद परिवादी के शरीर की जांच करने पर डा० द्वारा दी गई चिकित्सा रिपोर्ट के अभाव में यह विनिश्चय करना संभव नहीं था कि परिवादी के साथ बलात्कार किया गया था या नहीं।

8. विचारण न्यायालय ने परिवादी की दलील अस्वीकार कर दी। विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह सिद्ध नहीं किया गया है कि परिवादी और उसके पति मोहम्मद हलीम और मोहम्मद नयीम के नियंत्रण में हैं। परिवादी के पति के पास कुछ भूमि है और परिवादी तथा उसका पति मजदूर का काम भी करते हैं। विचारण न्यायालय की राय थी कि परिवादी ने मोहम्मद हलीम और मोहम्मद नयीम को खुश करने के लिए मिथ्या परिवाद नहीं किया है। उसने यह भी अभिनिर्धारित किया कि मोहम्मद हलीम और मोहम्मद नयीम द्वारा फाइल की गई भूमि सम्बन्धी कार्यवाही घटना से लगभग 4 वर्ष पूर्व सन् 1964 में संस्थित की गई थी, अतः अपीलार्थी के विरुद्ध मिथ्या मामला फाइल करने को प्रेरित करने के लिए कोई तुरन्त प्रकोपन सुलभ नहीं था। उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के निष्कर्ष से सहमति प्रकट की है। विचारण के समय मुखिया की परीक्षा न किए जाने के बारे में, जिसकी परीक्षा बाद में अब इस न्यायालय के आदेश के अनुसरण में कि गई है, यही मत व्यक्त करना होगा और इसके परिणाम नहीं निकलते। अब मुखिया का कहना है कि परिवादी और उसका पति घटना के बारे में परिवाद करने के लिए उसके पास नहीं गए। घटना के बारे में उसने कुछ भी नहीं बताया। ध्यान रहे उसकी परीक्षा घटना से लगभग 12 वर्ष बाद की गई। महत्व की बात यह है कि उस परिवाद में उसका नाम साक्षी के रूप में दिया गया था। यदि वह उसके पास वास्तव में न जाती तो परिवादी उसका नाम शामिल करने की जोखिम नहीं उठा सकती थी। परिवादी और उसके पति ने अपने अभिसाक्ष्य में कहा है कि वे उसके पास घटना की तारीख को गए थे। उसे यह दिखाने के लिए साक्षी के रूप में प्रोद्भूत किया गया कि घटना के तुरन्त बाद परिवादी ने उसके समक्ष अपराध के बारे में कथन किया था जोकि संपोषक साक्ष्य होगा। 12 वर्ष का अन्तराल एक बहुत लम्बा अन्तराल है और विशेष रूप से न्यायालयों में आधे मन से कथन करने के लिए सीधी-सादी आत्मा वाले व्यक्तियों के लिए। इन परिस्थितियों में, यह अभिनिर्धारित करना कठिन है कि मकबूल के साक्ष्य से न्यायालय के समक्ष अन्य साक्षियों के साक्ष्य पर किसी भी प्रकार से प्रभाव पड़ा है। यही आलोचना मकबूल के साक्ष्य के बारे में लागू होती है। वह दूसरा साक्षी है जिसकी सन् 1980 में मुखिया के साथ परीक्षा की गई थी। मकबूल का साक्ष्य है कि उस तारीख को घटना-स्थल के नजदीक नहीं गया था, जिसको घटना घटी हुई बताई गई है। उस पुलिस के आदमी की परीक्षा न करने के बारे में, जिसके बारे में कहा गया कि उसने परिवादी द्वारा की

गई रिपोर्ट लिखने से इन्कार कर दिया था, यह उल्लेख करना होगा कि ऐसा करना परिवादी से ऐसी कोई चीज करने के लिए कहना होगा जिसका करना बिल्कुल असंभव होगा। कितने पुलिस अधिकारी ऐसे हैं, जिन्होंने वस्तुतः अपना कर्त्तव्य पूरा नहीं किया है जो साक्षी के रूप में न्यायालय के समक्ष आकर यह स्वीकार करेंगे कि वे अपना कर्त्तव्य निर्वहन करने में असफल रहे है, न्यायालय सुरक्षित रूप से यह उपधारणा कर सकता है कि इसके बावजूद कि परिवादी का अभिकथन सही है, वह ऐसे उपेक्षावान पुलिस अधिकारी से साक्ष्य दिलवाने में सफल नहीं होगी। तथ्य यहीं रहता है कि परिवादी ने ठीक अगले दिन परिवाद में उसका हवाला दिया है और उसने तथा उसके पति ने परिवाद में पुलिस के विरुद्ध कर्त्तव्य की उपेक्षा का ऐसा कथन करके घोर जोखिम उठाई है। बहरहाल, इस मामले में उक्त पुलिस अधिकारी की परीक्षा न करने से कोई असर नहीं पड़ा। चिकित्सा-परीक्षा रिपोर्ट और कपड़े पेश न करने के बारे में जिनपर वीर्य के निशान थे, विचारण न्यायालय ने मत व्यक्त किया है कि परिवादी एक ऐसी औरत है जिसने चार बच्चों को जन्म दिया है, इसलिए यह संभव है कि उसके गुप्तांगों पर कोई क्षतियां न हुई हों। चूंकि परिवादी और उसका पति सुदूर क्षेत्र में रहने वाली संथाल जनजाति जैसे पिछड़े हुए समाज के व्यक्ति हैं, इसलिए उनसे यह प्रत्याशा नहीं की जा सकती कि उन्हें यह ज्ञान हो कि तुरन्त डाक्टर के पास जाना चाहिए। वस्तुतः परिवादी ने अभिसाक्ष्य दिया है कि घटना के बाद उसने स्नान कर लिया और अपने कपड़े धो लिए। हो सकता है कि परिवादी के शरीर पर कोई क्षतियां न होने मात्र से परिवादी का कथन अविश्वसनीय न हो। मात्र इसलिए कि परिवादी एक असहाय शिकार थी, जिसे बलपूर्वक बहुत अधिक शारीरिक प्रतिरोध नहीं करने दिया गया उस पर अविश्वास नहीं किया जा सकता। यदि अभिलेख पर विद्यमान साक्ष्य विश्वसनीय है तो ऐसी स्थिति में पहले चिकित्सा रिपोर्ट पेश न करने से बहुत अधिक प्रभाव नहीं पड़ेगा, फिर भी यह किसी ने नहीं कहा है कि ऐसी कोई रिपोर्ट थी और इसे पेश नहीं किया गया।

9. परिवादी के अभिसाक्ष्य के पढ़ने से पता चलता है कि उसके आसपास चारों ओर सच ही सच है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 133 का कहना है कि सह-अपराधी अभियुक्त-व्यक्ति के विरुद्ध सक्षम साक्षी होगा और कोई दोषसिद्धि इसलिए अवैध नहीं है कि वह किसी-सह-अपराधी के असंपुष्ट परिसाक्ष्य के आधार पर की गई है। किन्तु पद्धति का नियम है कि अन्य स्वतन्त्र साक्ष्य द्वारा सह-अपराधी के साक्ष्य को संपुष्ट कर

लेना प्रज्ञापूर्ण होगा। पद्धति का नियम मानव-अनुभव पर आधारित है और इसका समावेश भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 के दृष्टांत (ख) में किया गया है, जिसका कहना है कि सह-अपराधी विश्वसनीयता के अयोग्य होता है जब तक कि तात्विक विशिष्टियों में उसकी संपुष्टि नहीं होती। हालांकि, बलात्कार की शिकार को सह-अपराधी नहीं माना जा सकता, फिर भी अनेक वर्षों के दौरान हमारे देश में किए गए अनेक न्यायिक विनिश्चयों के फलस्वरूप बलात्कार के मामले में क्षतिग्रस्त का साक्ष्य है सह-अपराधी के साक्ष्य की तरह माना जाता है, जिसके लिए संपुष्टि आवश्यक है (**रामेश्वर बनाम राजस्थान राज्य**[1], **गुरुचरण सिंह बनाम हरियाणा राज्य**[2] और **कृष्ण लाल बनाम हरियाणा राज्य**[3] देखिए)। भारतीय न्यायालयों ने यह माना है कि ऐसे मामलों में संपुष्टि का नियम उस रूप में होना चाहिए जिस रूप में उसका प्रतिपादन मु० न्या० लार्ड रीडिंग ने **सम्राट बनाम बास्करविल्ले**[4] में किया था। जहां मामले का विचारण इंगलैंड की भान्ति जूरी की सहायता से किया जाता है, वहां यह आवश्यक है कि न्यायाधीश जहां कहीं संपुष्टि आवश्यक है वहां संपुष्टि से संबंधित पद्धति का उपरोक्त नियम जूरी के ध्यान में लाए किन्तु जहां मामले का विचारण अकेले न्यायाधीश द्वारा किया जाता है, जैसा कि भारतीय न्यायालयों में किया जाता है, वहां निर्णय के दौरान यह संकेत किया जाना चाहिए कि न्यायाधीश के दिमाग में वह सिद्धांत था जिसमें उसने यह निर्णय तैयार किया है और यदि किसी मामले में न्यायाधीश यह देखता है कि ऐसी संपुष्टि की आवश्यकता नहीं है तो उसे ऐसी संपुष्टि की आवश्यकता से मुक्ति के कारण देने चाहिएं। किन्तु यदि दोषसिद्धि बिना किसी संपुष्टि के अभियोक्त्री के साक्ष्य पर आधारित है तो वह मात्र इसी आधार पर अवैध नहीं होगी। विवाहित और बड़ी स्त्री की दशा में ऐसी संपुष्टि का आग्रह करना हमेशा सुरक्षित होगा। जहां कहीं संपुष्टि आवश्यक है, वहां वह स्वतन्त्र स्रोत से होनी चाहिए किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि प्रभावित व्यक्ति के साक्ष्य का प्रत्येक अंश सूक्ष्म रूप से स्वतन्त्र साक्ष्य द्वारा पुष्ट किया जाए। ऐसी संपुष्टि या तो सीधे साक्ष्य से या परिस्थितिजन्य साक्ष्य से या दोनों से अपेक्षित की जा सकती है। हमारे समक्ष वाले प्रस्तुत मामले में विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि परिवादी के साक्ष्य की तात्विक विशिष्टियों में संपुष्टि शेख लफीद (अभियोजन साक्षी-1), जुमन

---

[1] [1952] एस० सी० आर० 377.

[2] [1973] 1 उम० नि० प० 165=[1973] 2 एस० सी० आर० 197.

[3] [1981] 1 उम० नि० प० 1117=[1980] 3 एस० सी० आर 305.

[4] [1916] 2 के० बी० 658.

नदाफ (अभियोजन साक्षी-2) और जीतराय (अभियोजन साक्षी-4) परिवादी के पति के साक्ष्य से हो गई है। उच्च न्यायालय ने भी इन साक्षियों के साक्ष्य के आधार पर कार्य किया है। शेख लफीद (अभियोजन साक्षी-1) का कहना है कि उसने अपीलार्थी को परिवादी के ऊपर चढ़े देखा था और यह कि परिवादी ने भी उसे अपराध के बारे में बताया था। जुमन नदाफ (अभियोजन साक्षी-2) का कहना है कि उसने घटना के समय परिवादी की चीख सुनी तो उसने देखा कि अपीलार्थी उस जगह से भाग रहा था। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय को उनके साक्ष्य को अस्वीकार करने के लिए ठोस आधार नहीं मिला। जीतराय (अभियोजन साक्षी-4) ने न्यायालय को बताया है कि परिवादी ने घटना के थोड़ी देर बाद ही घटना विस्तारपूर्वक उसे बतायी थी। वकील रमा कांत ठाकुर (अभियोजन साक्षी-5) ने जिन्होंने परिवाद लिखा था, कथन किया है कि उसने परिवाद तैयार किया था, जिसमें परिवादी के कहने के अनुसार अपराध का सारा विवरण दिया गया है। शेख लफीद (अभियोजन साक्षी-1) और जुमन नदाफ (अभियोजन साक्षी-2) द्वारा आंखों देखी घटना के साक्ष्य के अलावा घटना के तुरन्त बाद अपने पति से परिवादी द्वारा किया गया कथन भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 157 के अधीन ग्राह्य है और उसका संपोषक महत्व है। अधिवक्ता में किए गए निवेदनों के प्रकाश में इस न्यायालय द्वारा इससे पहले किए गए आदेश के अनुसरण में परीक्षित साक्षियों के साक्ष्य सहित उपबन्ध सामग्री पर ध्यानपूर्वक विचार करने के बाद हमारा मत है कि उच्च न्यायालय के निर्णय में संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं है।

10. अतः अपील असफल होती है और खारिज की जाती है। अपीलार्थी इस समय जमानत पर है, उसे निदेश दिया जाता है कि वह अभ्यर्पण करे और अधिरोपित दण्डादेश का शेष भाग भोगे।

अपील खारिज की गई।

कृ०